

01 "क्या कर सकते हैं?" से "कर सकते हैं!" तक की यात्रा

गौरी मिराशी और
पारुल पटेल

अक्टूबर 2009 की बात है। जोधपुर, राजस्थान के निकट लोरदी देजगरा नामक गाँव के दस–वर्षीय आठ बच्चों ने सोलह बाल–विवाहों को होने से रुकवाया।

सन् 2010 में लैंसेस्टर, पेनसिल्वेनया, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ ग्यारह वर्षीय विद्यार्थियों ने स्थानीय शासन के साथ मिलकर अपने शहर में साइकिल मार्ग डिजाइन किया ताकि मोटापे की समस्या से छुटकारा पाया जा सके।

वर्ष 2011 में ताइपेइ, ताइवान के पाँच तेरह–वर्षीय विद्यार्थियों ने एक प्राचीन भूले–बिसरे गीत को पुनर्जीवित कर अपनी धरोहर को बहाल व संरक्षित किया।

विभिन्न देशों और संस्कृतियों के हजारों ऐसे किस्सों में से ये तीन किस्से ऊपर दिए गए हैं। ये तीनों किस्से जिस एक चीज को साझा करते हैं वह है, अपने समुदाय को बदल पाने की बच्चों की सामर्थ्य। इसे डिजाइन फॉर चेंज की संस्थापक, किरण बीर सेठी के शब्दों में कहें तो, 'हम कर सकते हैं' का संकल्प।'

किरण, डिजाइनर से शिक्षक, प्राचार्या से शिक्षा सुधारक और



हम कर सकते हैं!

एक पैरोकार से सामाजिक उद्यमी बनीं। राष्ट्रीय डिजाइन संस्थान (एन.आइ.डी.), अहमदाबाद की एक प्रशिक्षित ग्राफिक डिजाइनर होने के चलते किरण बड़े आराम से डिजाइन की भाषा – अभ्यास, प्रारूप, डिजाइन मानकों – का इस्तेमाल करते हुए न सिर्फ पाठ्यचर्या में नयापन लाती हैं बल्कि समुदाय–आधारित सामाजिक कार्यक्रम भी बना लेती हैं।

उनकी दलील बड़ी सरल है। जिस दुनिया में जीवन के शुरुआती पन्द्रह सालों में बच्चों से जब यह अपेक्षा होती है कि जो कहा जाए, सिर्फ वही करने के अलावा उनके पास और कोई **चारा नहीं** है, तो फिर ऐसी दुनिया में बच्चों से "वास्तविक दुनिया से दो–चार होने के लिए तैयार" होने की अपेक्षा रखना मूर्खता ही होगी। यदि एक स्कूल, बच्चों को **स्कूल में** अच्छे से नियंत्रित रखने के अलावा कुछ और नहीं कर पाता तो फिर ऐसा स्कूल किसी काम का नहीं। निश्चय ही, **सहज बोध** तो यही कहता है कि स्कूल का काम जीवन में बुद्धिमत्तापूर्ण काम करने हेतु विद्यार्थियों को तैयार करना है। लेकिन ऐसे प्रयोजन में दुनिया को समझने, उसकी विसंगतियों की पड़ताल करने और उसकी चुनौतियों से निपटने की तैयारी **अपरिहार्य** हो जाती है।

सहज बोध को सहज व्यवहार में ढालने के मकसद से किरण बीर सेठी ने जब 'रिवरसाइड स्कूल' शुरू किया तो वह 'अनुपम' शिक्षण और 'रूपान्तरकारी' विद्यार्थी सहभागिता को साकार करने वाली परिकल्पक प्रक्रियाओं के 'मॉडलों' की एक प्रयोगशाला बन गया। हर साल इस स्कूल का समूचा पाठ्यक्रम अनुकूलन की प्रक्रिया से गुजरता है, विद्यार्थियों के फीडबैक की रोशनी में यह परीक्षित और संशोधित होता है। प्रक्रियाओं और उनके परिणामों को कागज पर उतारकर भविष्य के लिए उनका डॉक्यूमेण्टेशन और परिष्कार किया जाता है।

सहज बोध की इस शैली ने यह दिखला दिया है कि आप बच्चों को द्विघात समीकरणों, प्रकाश संश्लेषण और कविता की कद्र करना सिखाने के **साथ–साथ** उन्हें प्रजातंत्र या बाल शोषण के प्रति सजग रहने और संवेदनशील बनने का संस्कार भी दे सकते हैं। केवल गणित या विज्ञान में सर्वश्रेष्ठ बनने या सबसे तेज और ताकतवर बनने के दिन अब लद गए। अब तो संवेदना, सहयोग, अनुकूलन जैसी प्रवृत्तियों और सामूहिक कार्य, समस्या–समाधान, कम्प्यूटर ज्ञान और कल्पनाशील सोच जैसे कौशलों के सन्दर्भ में हमारे बच्चों को जानना–परखना भी दिनोंदिन महत्वपूर्ण होता जा रहा है। प्रमुख शिक्षाविद इन कौशलों और प्रवृत्तियों को 'इक्कीसवीं सदी के कौशल' मानते हैं।

देने की मनोवृत्ति में बच्चों को भी शामिल करने की जरूरत को महसूस करते हुए और बदलाव लाने की उनकी क्षमता में भरोसा रखते हुए रिवरसाइड टीम ने सन 2009 में **डिजाइन फॉर चेंज (परिवर्तन की अभिलाषा डी.एफ.सी.)** *नामक कार्यक्रम शुरू किया। अपने पहले ही साल में डी.एफ.सी. कार्यक्रम भारत के 30,000 स्कूलों तक पहुँचा और विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रेरित किया*



FIDS Process

कि वे अपने आसपास परिवर्तन लाएँ। आज यह अभियान कोई 35 देशों तक फैल गया है और **करोड़ों बच्चों को प्रोत्साहित कर रहा है कि वे खुद वह परिवर्तन बनें जिसे वे दुनिया में देखना चाहते हैं।**

डी.एफ.सी. विद्यार्थियों से चार एकदम सहज चीजें करने को कहता है – महसूस करें, कल्पना करें, करके देखें और

साझा करें (**फील, इमैजिन, डू, शेअर – फिड्स**)। इस आसान–से ढाँचे का इस्तेमाल करते हुए तमाम आयु–समूहों के बच्चे पहल कर रहे हैं, खुलकर अपनी बात कह रहे हैं, ऐसी योजनाएँ बनाकर उन्हें क्रियान्वित कर रहे हैं जो वाकई उनके समुदायों पर असर करती हैं – जातिगत भेदभाव और स्त्री–भ्रूण हत्या सरीखी युगों से चली आ रहीं सामाजिक समस्याओं को निपटाने से लेकर स्कूली बस्ते का बोझ कम कराने तक, खतरनाक वायरस के विरुद्ध लड़कियों का टीकाकरण कराने से लेकर बेरोजगारों को रोजगार दिलाने तक, ज्ञानार्जन के हिसाब से स्कूलों में बेहतर वातावरण बनाने से लेकर अपने दादा–दादियों, नाना–नानियों को पढ़ाने के सामुदायिक कार्यक्रम की कमान अपने हाथ में लेने तक। इन तमाम उपयोगी कार्यक्रमों के आकल्पन व क्रियान्वयन के द्वारा बच्चे यह दर्शा रहे हैं कि मनवांछित भविष्य रचने का माद्दा उनमें कूट–कूटकर भरा है।

इस समूची प्रक्रिया का पहला चरण है **महसूस करना** – ऐसी कोई भी बात जो बच्चों को परेशान करती हो, ऐसी कोई चीज जिसे बच्चे बदलना चाहते हैं। सबसे पहले तो यह विश्लेषण किया जाता है कि यह समस्या बच्चों को परेशान क्यों कर रही है, इसके बाद समस्या की जड़ में निहित मानवीय व्यवहारों को खंगाला जाता है, तब फिर इससे सम्बद्ध विभिन्न भागीदारों से विचार–विमर्श किया जाता है।

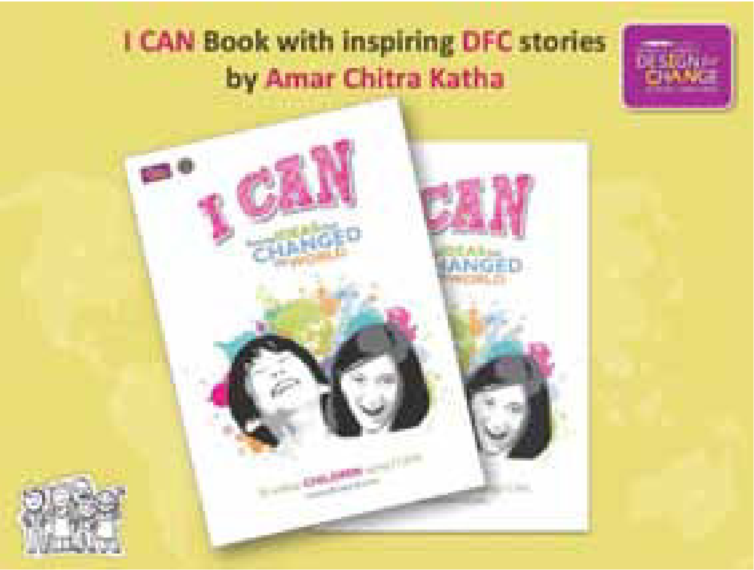
अगले चरण में समाधान के सर्वश्रेष्ठ घटनाक्रम की समूची **परिकल्पना** रखी जाती है। नतीजतन, बच्चों को यह सोचने की प्रेरणा मिलती है कि यदि इसे ठीक करने की तमाम जिम्मेदारी उन्हें सौंप दी जाए तो स्थिति क्या होगी! इस बिन्दु पर समाधान की व्यावहारिकता को लेकर दिमाग खपाने की जरूरत नहीं है। महत्वपूर्ण तो यह है कि वे अपनी कल्पना के घोड़ों को बेलगाम, बेहिसाब दौड़ने दें ताकि वांछित समाधान की सम्भावित मूरत की छवि वे **देख सकें**।

अगला कदम है **करना** – बच्चों की कल्पना को साकार करने का चरण। तमाम उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखते हुए अपने सर्वश्रेष्ठ मनसूबे को हकीकत में बदलने की एक ठोस कार्ययोजना तैयार करते हैं। रणनीति बन जाने के बाद वे बस उसे क्रियान्वित करने में जुट जाते हैं।

और अन्तिम चरण है **साझेदारी**। इस चरण में विद्यार्थी अपने किए–धरे पर मनन करते हैं और फिर व्यापक स्कूली समुदाय, अभिभावकों और बाकी दुनिया से इस बाबत हुए अपने अनुभव बाँटते हैं। इसके चलते उसी समस्या से जूझ रहे अन्य लोग, बच्चों द्वारा गढ़े गए इस समाधान को अपने यहाँ भी लागू कर सकते हैं। और यही नहीं, इसके जरिए यह सन्देश भी जाता है कि अगर हम कर सकते हैं तो तुम भी कर सकते हो। इसके अलावा, इसमें सार्वजनिक समीक्षा और ऐसे सुझावों की गुंजाइश भी बनती है जो बच्चों द्वारा लिखी गई परिवर्तन की इस इबारत को एक तरह से समृद्ध ही करते हैं।

'रिवरसाइड' में बाँची गई कल्पनापूर्ण सोच (**डिजाइन थिंकिंग**) और **फिड्स** की कारगरता को दर्शाने वाली उत्कृष्ट कथा के पात्र तीसरी कक्षा के वे बच्चे हैं जो अपने स्कूल के प्रवेश द्वार के बाहर जमे कूड़े के ढेर को ठिकाने लगाना चाहते थे। बच्चों को इसका जो एकदम फौरी समाधान नजर आया वह था बाहर जाकर उस कूड़े के ढेर को अपने हाथों से साफ करना और उन्होंने यह किया भी। लेकिन एक हफ्ते बाद, कूड़े का ढेर फिर से आ धमका। बच्चों को यह तो एहसास हो गया कि उनके दिमाग में आने वाले सबसे पहले समाधान को जस–का–तस अपनाने की भूल उनसे हुई थी। दरअसल, उन्होंने कुछ बुनियादी चीजों का अनुसरण तो किया ही नहीं था, जैसे अव्वल तो यह पूछना कि ऐसा क्यों होता है, इसके बाद उस पर नजर रखना, और फिर उन मानवीय प्रवृत्तियों को चिह्नित करना जिनके चलते प्रथमतया यह समस्या खड़ी होती है। बस फिर क्या था, फिड्स प्रक्रिया के तहत वहाँ कचरा फेंकने वाले लोगों को ही अपने साथ शामिल कर उन्होंने इसका एक बेहतर और टिकाऊ समाधान खोज निकाला।

इस प्रक्रिया की सफलता के लिए मेण्टर (मार्गदर्शक) की



भूमिका बड़ी अहम होती है। ठेठ शुरुआत से ही वातावरण, विद्यार्थी स्वामित्व, सहयोग और रचनात्मकता के अनुकूल होना चाहिए। विद्यार्थियों को महसूस कराया जाना चाहिए कि वे ही प्रभारी हैं और जवाबदेह भी। जरूरी नहीं कि उनके द्वारा चुनी हुई समस्या वैश्विक महत्व रखती हो – जैसे जलवायु–परिवर्तन, गरीबी, बेरोजगारी – समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसे विद्यार्थी खुद महसूस करते हों और उसे लेकर वे खुद चिन्तित रहते हों। मार्गदर्शक का काम है विद्यार्थियों को समस्या के लक्षणों में उलझा रहने देने की बजाय उसके मूल में जाने के लिए प्रोत्साहित करना। मार्गदर्शक का काम है विद्यार्थियों को खुद अपने बूते अपना मॉडल बनाने, गलतियाँ करने और उन्हें सुधारने और अपनी प्रक्रिया व अपने उत्पाद को परिष्कृत करने की आजादी देना। समस्या को सुलझाने ही नहीं उसे समझने में भी व्यापक समुदाय से परस्पर–संवाद की जरूरत का विद्यार्थियों को एहसास कराना भी मार्गदर्शक की जिम्मेदारी होती है। सार्थक सामुदायिक संवाद की प्रक्रिया को आसान बनाने से विद्यार्थी कक्षा से बाहर निकलकर एक व्यापक जन–समुदाय के समक्ष अपने विचार रखते हैं, उनकी पैरवी करते हैं और उनके साथ प्रयोग करते हैं।

डी.एफ.सी. अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिए दो प्रारूपों में उपलब्ध है। डी.एफ.सी. स्कूल चैलेंज, एक हफ्ते की एक प्रतियोगिता है जिसमें बच्चों से कहा जाता है कि वे कोई ऐसी चीज पहचानें जो उन्हें परेशान करती है और वे इसका एक समाधान प्रस्तुत करें। यह पहला कदम है जहाँ बच्चे "मैं क्या कर सकता हूँ?" कहने की बजाय "हाँ, मैं कर सकता हूँ।" कहना सीखते हैं। समग्र डी.एफ.सी. सामग्री 9 भारतीय भाषाओं और 6 अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं में ऑनलाइन उपलब्ध है – कोई भी इसे निशुल्क डाउनलोड कर सकता है! डी.एफ.सी. वेबसाइट (**www.dfcworld.com**), परिवर्तन के प्रेरणापूर्ण प्रसंगों को साझा करने का एक ऐसा उत्कृष्ट मंच बनकर उभरी है जहाँ दुनिया भर के विद्यार्थी एक–दूसरे के काम से प्रेरित होते हैं।



BTC Conference

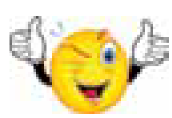
डी.एफ.सी. पाठ्यचर्या (डी.एफ.सी. करिक्युलम) वह दूसरा मंच है जो समूचे शैक्षणिक वर्ष के लिए अध्यापकों द्वारा संचालित होता है। इसमें विद्यार्थियों के लिए और अधिक दीर्घावधि समाधानों पर काम करने का सुभीता होता है। जिन स्कूलों में 'नैतिक शिक्षा' या 'सामाजिक रूप से उपयोगी उत्पादक कार्य' का विशेष कालखण्ड होता है उनके लिए डी.एफ.सी. पाठ्यचर्या, अत्यन्त कारगर मंच के बतौर प्रस्तुत होती है। पिअर्सन लॉन्गमैन नामक प्रकाशन समूह ने तो 'अ ब्यूटीफुल लाइफ' शीर्षक से अपनी माध्यमिक विद्यालयीन नैतिक शिक्षा पाठ्यपुस्तक श्रंखला में भी डी.एफ.सी. पाठ्यचर्या को शामिल किया है।

इसके अलावा, भारत में बच्चों की किताबों के अग्रणी

प्रकाशक अमर चित्रकथा (ए.सी.के.) ने तो इन विद्यार्थी–संचालित कथाओं को पूरी–की–पूरी एक किताब की सूरत में पेश किया है, जिसका शीर्षक है 'मैं कर सकता/सकती हूँ – बीस ऐसे तरीके जिनके द्वारा बच्चे पूरी दुनिया ही बदले दे रहे हैं।' इस किताब में 20 परिवर्तन कथाएँ हैं, जो सारी की सारी दुनिया भर के नवयुवा नागरिकों द्वारा कार्यान्वित हो रही हैं। एसीके ने कुछेक डी.एफ.सी. कथाओं को कॉमिक्स के रूप में भी ढाला है जो देश की सुप्रसिद्ध कॉमिक्स पत्रिका 'टिंकल' में प्रकाशित होंगी। पिअर्सन और एसीके के जरिए विद्यार्थी अपने हमउम्र नायकों के बारे में पढ़ रहे हैं और उनसे प्रेरण ा ले रहे हैं।

सन 2012 में 'डिजाइन फॉर चेंज' ने अपनी प्रकार की पहली 'बी द चेंज कॉन्फ्रेंस (खुद परिवर्तन बनिए अधिवेशन)' का आयोजन किया जिसमें दुनिया भर के डिजाइनर, कर्ता, विद्यार्थी और शिक्षक शामिल हुए और उन्होंने अपने–अपने डी.एफ.सी. अनुभव साझा किए। इस अधिवेशन में वक्ताओं की औसत आयु महज 14 वर्ष थी। इसकी सफलता ने यह तो स्पष्ट कर दिया कि हम अगर बच्चों को अवसर दें तो वे हमें विस्मित कर देने का माद्दा रखते हैं।

अपनी शुरुआत के चार बरस बाद 35 से भी अधिक देशों का हमारा अनुभव हमारे इसी विश्वास की पुष्टि करता है कि **हर बच्चा कर सकता है!**



पारुल पटेल *डी.एफ.सी. की प्रशासनिक कर्ता–धर्ता हैं। सन 2011 से रिवरसाइड स्कूल से जुड़ीं पारुल डी.एफ.सी. कार्यक्रम की शुरुआत से ही इसमें सक्रिय रही आई हैं।*

गौरी मिराशी *डी.एफ.सी. इण्डिया की समन्वयक हैं। इन्हें india@dfcworld.com पर आपकी प्रतिक्रियाओं का इन्तजार है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*